Shodhaamrit, Vol.-2; Issue-2 (July-Dec.) 2025 : Page No.-326-331

शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अर्धवार्षिक, सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित शोध पत्रिका)

**ISSN : 3048-9296 (Online)**
**3049-2890 (Print)**
**IIFS Impact Factor-2.0**
Vol.-2; issue-2 (July-Dec.) 2025
Page No- 326-331

©2025 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

**डॉ. अनुपम कुमारी**
पूर्व शोध छात्रा,
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग,
मगध विश्वविद्यालय, बोध गया.

Corresponding Author :
**डॉ. अनुपम कुमारी**
पूर्व शोध छात्रा,
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग,
मगध विश्वविद्यालय, बोध गया.

# संस्कृत भाषा का इतिहास, स्वरुप एवं विकास क्रम

**शोध - सार :** संस्कृत भाषा जगत की सबसे प्राचीनतम भाषाओं में उपलब्ध है। भारतीय संस्कृति एवं भारतीय प्राचीन सभ्यता का जो विशाल संग्रह एवं भंडार है वह इसी भाषा में दिखलाई पड़ता है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक संस्कृत भाषा में बहुत सी रचनाएं हुई हैं और होते रही हैं साहित्य की रचना निरंतर रुप में होते जा रही है। जब लिखित रुप में भाषा को लिखने का कोई भी साधन प्रचलित नहीं था उस काल में भी संस्कृत भाषा की मौखिक रचनाएं निरंतर रुप में चल रही थी। उस मौखिक परंपरा के अंतर्गत जो भी रचनाएं उस समय में हुई थी वह सभी आज वर्तमान काल में भी उसी रुप में अक्षरशः पूर्ण रुप से सुरक्षित हैं। यही नहीं यहां तक की इनके उच्चारण करने की जो विधि है वह भी पूर्ववत् स्वरुप में ही है उनमें किसी भी प्रकार का कोई मौलिक परिवर्तन नहीं किया गया है। संस्कृत भाषा इसीलिए देवों की वाणी या सुरभारती कही जाती है। साहित्य की अविरल धारा जो इस भाषा में दिखाई देती है वह संस्कृत भाषा की अमरता को प्रमाणित करती है। मानव जीवन के उन सभी पक्षों पर इनमें प्रकाश डाला गया है जो हमारे देश की प्राचीन दृष्टि की व्यापकता को प्रमाणित करती है।

**मुख्य शब्द-** संस्कृत भाषा, भाषा विज्ञान, पद विज्ञान, दिव्योत्पत्ति सिद्धांत, वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत, साहित्यिक प्रगति।

**भूमिका :** वैज्ञानिक दृष्टिकोण से संस्कृत भाषा भारतीय परिवार की भाषा है। लैटिन, स्पेनी, अंग्रेजी ग्रीक, फ्रांसीसी, रुसी आदि यह जितने भी यूरोपीय भाषाएं हैं यह सभी इस परिवार की ही भाषाऐं कही गई हैं। इसका यही कारण है कि संस्कृत शब्दों के समान ही जो ध्वनि एवं अर्थ वाले अनेक शब्द हैं वह सभी इन भाषाओं में प्राप्त होते हैं। पिछले 200 सालों में यूरोपीय विद्वानों ने संस्कृत का पर्याप्त अध्ययन इन्हीं भाषा से तुलना के आधार पर किया है। इन तथ्यों से यही पता चलता है कि विदेशों में सबसे ज्यादा आदर संस्कृत भाषा को ही मिला हुआ है। भारत की सभी आधुनिक भाषाएं संस्कृत भाषा से ही जुड़ी हुई प्रतीत होती है। भाषा शास्त्र की उत्पत्ति में बिना किसी संदेह के यह कहा जा सकता है कि संस्कृत का प्रमुख हाथ रहा है। भाषा शास्त्र के उत्पत्ति की जब बात सामने आती है तो हमारा तात्पर्य 19वीं शताब्दी के शुरुआत में यूरोप में

सामने आती है तो हमारा तात्पर्य 19वीं शताब्दी के शुरुआत में यूरोप में विकसित तुलनात्मक व्याकरण की प्रणाली से है। यूरोपीय विद्वानों ने संपूर्ण विश्व की भाषाओं को हिब्रू से उत्पन्न माना तथा इन्हीं हिब्रू को आधार बनाकर कतिपय विद्वानों ने यूरोपीय भाषाओं का अध्ययन भी प्रस्तुत किया था। जिनमें उनका प्रयास सफल नहीं हो सका। यूरोपीय विद्वानों को संस्कृत भाषा का जब पता चला तब वह अपने इस भ्रांति धारणा को छोड़कर भाषा शास्त्र की वैज्ञानिक दिशा की तरफ अग्रसरित होने लगे। संस्कृत को परिचय देने का श्रेय यूरोपीय जगत में सर विलियम जॉन्स को जाता है।[1] सर विलियम जॉन्स से पूर्व भी कोदों नाम का फ्रेंच पादरी ने सन 1767 में फ्रेंच इंस्टीट्यूट के पास भारत से एक लेख भेजा था जिसमें लैटिन की समानताओं एवं संस्कृत भाषा की तरफ उसने ध्यान खींचा था।संस्कृत अस् धातु के वर्तमान के रूपों को उदाहरण देते हुए उसने लैटिन के रूपों से इनका तुलनात्मक अध्ययन भी किया। लेकिन कोदों को संस्कृत के परिचय देने का श्रेय नहीं मिल पाया लगभग 40 वर्षों के पश्चात उनका लेख प्रकाशित हुआ तथा उससे पूर्व ही कई विद्वानों ने इस समानता की तरफ यूरोपीय जगत का ध्यान आकृष्ट कर दिया था।[2] संस्कृत भाषा की जो पद रचना है वह बहुत अद्भुत है भले ही उसका मूल उद्गम स्रोत कुछ भी रहा हो क्योंकि संस्कृत भाषा लैटिन से अत्यधिक समृद्ध ग्रीक से अत्यधिक पूर्ण तथा दोनों से अधिक परिष्कृत है इतना होते हुए भी यह उन दोनों से क्रियाओं के मूल रूपों तथा व्याकरण के रूपों की दृष्टि से घनिष्ठतया संबंध है"[3]

**भाषा विज्ञान का नामकरण एवं परिभाषा:-** मनुष्य जीवन की सबसे प्राचीनतम उपलब्धि भाषा है। भारत में चिरकाल से भाषा का अध्ययन निरंतर होता चला आ रहा है भाषा से संबंधित वेदों में अनेकशः विचार को प्रस्तुत किया गया है:- "वाचं देवा उपजीवन्ति विश्वे वाचं गन्धर्वा: पशवोमनुष्या:वाचीमा विश्वा भुव-नान्यर्पिता।"[4]

अर्थात् यहां पर यह बताया गया है कि वाक्(वाणी/भाषा) से देवता,मनुष्य, गंधर्व एवं पशु सारे अपने जीवन का अधिकार प्राप्त करते हैं - अर्थात वाक् की प्रभावशीलता को इस मंत्र में प्रस्तुत किया गया है। पाणिनि शिक्षा में यह बताया गया है कि मंत्र के उच्चारण करने में अगर स्वर या वर्ण की जरा सा भी त्रुटि हो जाती है तो वहां पर अर्थ का अनर्थ हो जाता है। यथा -'इंद्रशत्रुवर्धस्व'[5] वृत्र ने इंद्र को मारने के लिए यज्ञ किया कि इंद्रशत्रु अर्थात वृत्र की जीत हो। वेद का पाठ करने वाले वेद पाठियों ने स्वर के उच्चारण करने में त्रुटि कर दी जिसका परिणाम यह हुआ कि वृत्र मार गया और इंद्र की जीत हुई। इसलिए वेदों के स्वर, वर्ण, अर्थ आदि का स्पष्ट ज्ञान अनिवार्य है।

**मन्त्रो हीन: स्वरतो वर्णतो वा**
**मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाह।**
**स वाग्व्रजो यजमानं हिनस्ति**
**यथेन्द्रशत्रु: स्वरतोऽपराधात्।।[6](पा0शिक्षा)**

सारण ने ऋग्वेदभाष्य भूमिका में शिक्षा का अर्थ दिया है जिसमें स्वर, वर्ण आदि के उच्चारण की शिक्षा दी जाती है, उसे शिक्षा कहते हैं।

"स्वरवर्णाद्युच्चारणप्रकारो यत्र शिक्ष्यते उपदिश्यते सा शिक्षा"[7](सायण, ऋग्वेदभाष्य0 पृ049)

इसलिए शिक्षा का उद्देश्य है- वर्णों के उच्चारण की शिक्षा देना, किस वर्ण का उच्चारण किस स्थान पर किया जाए ,उसमें क्या प्रयत्न करना पड़ता है, उनका विभाजन किन रूपों में होता है, तथा कितने स्थान और प्रयत्न है, स्वर कितने हैं, तथा उन स्वरों का उच्चारण किस प्रकार किया जाता है, इत्यादि।

भाषा विज्ञान वह विज्ञान है जिसमें भाषा विशिष्ट कई और सामान्य का समकालिक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक और प्रयोगिक दृष्टि से अध्ययन एवं तद्विषयक सिद्धांतों का निर्धारण किया जाता है"[8] भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन को ही भाषा विज्ञान कहते हैं वैज्ञानिक अध्ययन से हमारा तात्पर्य सम्यक रूप से भाषा के बाहरी और भीतरी रूप एवं विकास आदि के अध्ययन से है।[9] भाषा विज्ञान में जो विज्ञान शब्द का प्रयोग किया गया है वह शब्द तात्विक आलोचना, तात्विक दर्शन एवं तात्विक विश्लेषण के आधार पर है।[10]

भारत में भाषा के संबंध में सदैव से ही विचार मंथन होता रहा है लेकिन वर्तमान समय में भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन आधुनिक काल की ही देन है। भाषा की व्यापकता एवं इसकी प्रभावशीलता का आधुनिक समय में इतना वर्णन हुआ कि इसका स्वरूप

वैज्ञानिक अध्ययन की श्रेणी में सम्मिलित हो गया। भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन होने के पश्चात इसके नामकरण की समस्या की उत्पत्ति हुई। यूरोप में सबसे पहले भाषा के तुलनात्मक अध्ययन को फिलोलॉजी नाम प्रदान किया गया। इसके बाद विभिन्न विद्वानों ने इस विषय के विभिन्न नामकरण किया। प्रारंभिक व्याकरण एवं भाषा विज्ञान में पार्थक्य स्थापित न हो सकने के कारण इसका नाम तुलनात्मक व्याकरण या कम्परेटिव ग्रामर भी रखा गया। फ्रांस में इस विज्ञान को लिंग्विस्टिक कहा गया।[11] अर्थात इसका मतलब यह है कि हम किसी भी भाषा का विवेचन अनुशीलन एवं अध्ययन वैज्ञानिक दृष्टिकोण से करना सिख जाते हैं, तथा जब हम इस तरह का वर्णन अनुशीलन एवं अध्ययन करना सीख जाते हैं तब इस दृष्टिकोण से किन्हीं अन्य भाषाओं का भी विवेचन करते हैं तथा एक भाषा के जो नियम एवं सिद्धांत आदि हैं उनका अन्य भाषाओं के नियमों एवं सिद्धांतों से तुलना एवं मिलान करने का प्रयास करते हैं।"[12]

**भाषा का स्वरुप:** जगत की सबसे उत्कृष्ट ज्योति भाषा है,जो मनुष्य के हृदय के अंधकार को खत्म करती है। समस्त मानवों के क्रिया-कलाप इस ज्ञान ज्योति के द्वारा ही सिद्ध होता है। भाषा विज्ञान के प्रसिद्ध आचार्य भर्तृहरि का मत है कि ज्ञान को प्रकाशित करने वाली भाषा ही है। जिसके अभाव में सविकल्पक् (नाम रुपादि - गुणयुक्त) ज्ञान संभव ही नहीं है।

**वाग् रूपता चेन्निष्क्रामेदवबोधस्य शाश्वती।**
**न प्रकाश: प्रकाशेत् सा हि प्रत्यवमर्शिनी।।[13]**
**(वाक्यपदीय 1-125)**

भाषा की इसी प्रकाशशीलता को ध्यान में रखकर आचार्य दंडी ने कहा है कि अगर शब्दरूपी ज्योति संसार में न जलती तो संसार में चारों तरफ अंधेरा ही रहता।

**इदमन्धन्तम: कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।**
**यदि शब्दाह्वयं जयोतिरासंसारं न दीप्यते।।[14]**
**(काव्यादर्श -1-4)**

भाषा के मुख्य रूप से दो रूप होते हैं -एक मौखिक भाषा जिसका प्रयोग व्यावहारिक रूप में बोलचाल के रूप में किया जाता है तथा दूसरा है साहित्यिक भाषा। बोलचाल की जो संस्कृत भाषा है उसका प्राचीन रूप कालिदास, भाष एवं शूद्रक आदि के नाटकों में प्राप्त होता है। सामान्यतः जो बोलचाल की भाषा है वह निश्चित तौर पर रुढ़ि मुक्त एवं सरल होती है, तो वहीं दूसरी तरफ जो साहित्यिक भाषा है वह परिष्कृत एवं अलंकृत होने लगती है। बोलचाल के रूप में जो भाषा का प्रयोग हुआ वही भाषा व्याकरण एवं उच्चारण के अनुशासन से मुक्त होकर धीरे-धीरे पाली, प्राकृत आदि परवर्ती भाषाओं के रूप में परिवर्तित होते चली गई, जबकि साहित्यिक स्वरुप इसका क्रमशः कठिनाई की ओर बढ़ा।

**भाषा समाज को एकसूत्र में बांधती है:-** भाषा पूरे जगत को एक सूत्र में बांधकर रखती है। विश्व में जितनी भी भाषाएं हैं वह सभी एकता को स्थापित करने में प्रभावकारी सिद्ध हुई है। अतः अलग होते हुए भी एकत्व की अनुभूति करते हैं। वैश्विक भाषा समस्त मानव को एकता के सूत्र में समन्वित कर विश्व-बंधुत्व की भावना जाग्रत करती है। "ऋग्वेद में भाषा को राष्ट्री (राष्ट्र- निर्मात्री)और संगमनी (संबद्ध करने वाली) कहा गया है। आचार्य भर्तृहरि ने उसे विश्व-निबंधनी( विश्व को मिलाने वाली या जोड़ने वाली कहा है।"[15]

**भाषा का मूलरुप वाक्य है, पद केवल व्यावहारिक:-** तात्विक दृष्टिकोण से अगर देखा जाए तो यह प्रमाणित होता है की भाषा का मूल वाक्य है। वाक्य ही वह सत्ता है जो मानव के विचार को पूर्ण एवं स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करती है।वाक्य का जो आधार है वह विचार है और विचारों का जो मूर्त रूप है वह वाक्य है। जब कोई एक भाव को अपने मन में रखकर विचार किया जाता है तो वह विचार पदों के द्वारा नहीं अपितु वाक्य रूप में होता है। भर्तृहरि के निम्नलिखित श्लोक इस प्रसंग में दृष्टव्य हैं-

**पदे न वर्णा विद्यन्ते वर्णेष्ववयवा न च।**
**वाक्यात् पदानामत्यन्तं प्रविवेको न कश्चन।।[16]**
**(वाक्यपदीय 1-73)**

वाक्य में पदों की सार्थकता के विषय में भर्तृहरि का यह मत है कि जिस तरह से पद में प्रकृति एवं प्रत्यय की कल्पना की जाती है, उसी प्रकार वाक्य में पदों की कल्पना एवं सार्थकता समझी जाती है।

**यथा पदे विभज्यन्ते प्रकृतिप्रत्ययादय:।**

**अपोद्धारस्तथा वाक्ये पदानामुपवर्णयते।।[17]**
**(वाक्यपदीय 2/10)**

महाभाष्यकर पतंजलि का भी यही कथन है कि वास्तविक सत्ता वाक्य की है पदों कि नहीं। पद विभाजन लोगों को समझाने का एक उपाय है।[18] पदों को वाक्य से निकाल कर समझाया जाता है कि यह कर्ता है ,यह कर्म है, यह क्रिया है ,इत्यादि। विश्लेषण की इसी प्रक्रिया को भर्तृहरि ने पारिभाषिक नाम 'अपोद्धार' (विश्लेषण) दिया है। वाक्य के हर एक पद का जो भी अर्थ बताया जाता है वह अपोद्धार से ही बताया जाता है एवं प्रत्येक पद में प्रकृति प्रत्यय का बोध कराया जाता है।[19] शास्त्रीय दृष्टिकोण से भी भाषा के सार्थक अंग वाक्य हींहै। व्यावहारिक दृष्टि से एवं बाल-बोधार्थ वाक्य अवयवों और पद अवयों पर विचार होता है।

**भाषा की उत्पत्ति:-** भाषा उत्पत्ति यह जो विषय है यह बहुत ही उलझा हुआ है। विद्वानों ने जो भी मत इन विषयों पर प्रस्तुत किए हैं, वह अपूर्ण एवं अनिर्णयात्मक है। भाषा की उत्पत्ति के संबंध में दो बातें अनिवार्य हैं -

1. वाग्यंत्र से ध्वनन या वर्णोच्चारण की क्षमता प्राप्त करना।
2. उच्चरित ध्वनि का अर्थ के साथ संबंध स्थापित करने का प्रारंभ। मानव को जन्म से ही कुछ कहने या बोलने की क्षमता प्राप्त है ,इसलिए वाग्- यंत्र का प्रयोग मानव जन्म काल से ही करता आया है।[20]

**दिव्योत्पति सिद्धांत:-** यह बहुत प्राचीन मत है। इस मत का यही कथन है कि जिस तरह से ईश्वर ने मानव सृष्टि की रचना की है, उसी तरह से मनुष्यों के लिए एक परिष्कृत भाषा भी दी। इस मत के अनुसार दैवीय शक्ति की सत्ता प्रत्येक कार्य के मूल में है। वेदों का ज्ञान उन ईश्वरीय शक्ति नहीं सृष्टि के आरंभ में दिया, जिसके द्वारा मनुष्य अपने सारे क्रियाकलाप चलाने में समर्थ हुआ। इस तरह से मूल भाषा के रुप में वैदिक संस्कृत प्राप्त हुई। वेदों, उपनिषदों, स्मृतियों एवं दार्शनिक ग्रन्थों में अनेकों प्रमाण इन विषयों पर प्राप्त होते हैं कि वेदों की उत्पत्ति ईश्वर के द्वारा ही हुई।[21]

**देवीं वाचमजनयन्त देवा स्थान विश्वरुपा:**
**पशवो वदंति।[22]**

अर्थात परमात्मा ने वाग्देवी भाषा को उत्पन्न किया एवं उसे सारे मानव बोलते हैं। भाषा की दिव्यउत्पत्ति का वर्णन इस मंत्र में स्पष्ट रूप से किया गया है। 'अइउण्' आदि जो 14 महेश्वर सूत्र हैं वह शिव के डमरु से ही उत्पन्न हुए हैं ऐसा माना जाता है। यह भी एक प्रकार से भाषा की दैवी उत्पत्ति का सूचक है।

**"नृतावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवपञ्चवारम्"।**[23]

संस्कृत आदि भाषा है इस मत को लेकर अनीश्वरवादी जैन एवं बौद्धों ने भी पालि एवं अर्धमागधी को आदिभाषा के रूप में कहना शुरू कर दिया। अरबी भाषा को मुसलमानों ने आदिभाषा कहना शुरू कर दिया।"सुसमिल्श नामक एक जर्मन विद्वान ने भाषा की इस दिव्योत्पति सिद्धांत का समर्थन करते हुए कहा है कि 'भाषा मानवकृत नहीं है, बल्कि यह ईश्वर से साक्षात् उपहार के रूप में मिली हुई है।"[24]

इस प्रकार भाषा की दैवीय उत्पत्ति के संबंध में जो भी मंत्र प्राप्त होते हैं उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि भाषा को परमात्मा ने ही उत्पन्न किया है।जैसा कि ऋग्वेद के इस मंत्र में साक्षात् रूप से वर्णन प्राप्त होते हैं जो इस प्रकार है –

**"तस्माद् यज्ञात् सर्वहुत ऋच:सामानिजज्ञिरे।**
**छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत"[25]**

बृहदारण्यक उपनिषद में भी इसका उल्लेख प्राप्त होता है –

**"अस्य महतो भूतस्य नि:श्वसितम् एतद्।**
**यद् ऋग्वेदो यजुर्वेद: सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस:"।[26]**

इस प्रकार इन सभी से भाषा की उत्पत्ति के संबंध में जो उल्लेख मिले हैं उससे इसकी दैवीय उत्पत्ति की प्रामाणिकता सिद्ध होती है। लेकिन एक बात तो सत्य है कि सार्थक एवं स्पष्ट रुप से उच्चारण करने योग्य जो ध्वनि यंत्र एवं उसे संचालित करने वाली जो बुद्धि प्राप्त हुई है वह परमात्मा की देन है। क्योंकि अगर यह मनुष्य को ईश्वरीय देन के रूप में ना मिला होता तो मनुष्य भी उन पशुओं के समान ही दयनीय होता।

**भारतीय आर्य भाषाएं:-** भारतीय आर्य भाषाओं का इतिहास जो है वह करीब 3500 सालों का प्राप्त होता है। यह वही काल हो सकता है जब वेदों की रचना हुई हो। वैसे वेद अत्यंत प्राचीनतम ग्रंथ के रूप में स्वीकार

किया जाता है लेकिन भाषा का जो स्वरुप वेदों में हमें वर्तमान समय में प्राप्त है उनके आधार पर वेदों का प्राणयन 3500 वर्ष पहले का प्रतीत होता है। भाषा एवं साहित्य का यह स्त्रोत निरंतर चलता रहा है। प्राचीन भारतीय आर्य भाषा के दो रुप प्राप्त होते हैं- 'वैदिक' और 'संस्कृत' कतिपय जन इन दोनों को 'संस्कृत'ही कहते हैं तथा कुछ इसे 'वैदिक संस्कृत' तथा 'संस्कृत' अथवा 'लौकिक संस्कृत' की संज्ञा देते हैं। संस्कृत केवल भारतीय भाषा ही नहीं है बल्कि यह पूरे विश्व की प्रमुख भाषा के रूप में मानी जाती है,तथा आधुनिक भाषा विज्ञान की जब से शुरुआत हुई इसका महत्व तब से लेकर और भी अधिक बढ़ गया है।[27]

**वैदिक संस्कृत-**वेदों में जिस भाषा का प्रयोग हुआ है उसे 'वैदिक'या 'वैदिक संस्कृत' कहा जाता है। कतीपय लोगों ने इसे 'छंदस'[28] भी कहा है।वेद चार प्रकार के हैं- ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद एवं अथर्ववेद। 'संस्कृत'एवं जो 'वैदिकसंस्कृत'है इनके ध्वनियों में भिन्नता है यह ध्वनियां मूल भारतीय यूरोपीय ध्वनियों का ही विकसित रुप है। 'वैदिक संस्कृत'को 'वैदिकी', 'वैदिक,' 'छंदस' भी कहा जाता है।[29] ऋग्वेद में इसका प्राचीन रूप प्राप्त होता है। ऋग्वेद छंदोबद्ध है, इसलिए उसे 'छंदस्' कहा जाता है। गद्यांश के रूप में वर्णन यजुर्वेद एवं अथर्ववेद में मिलता है। जिससे गद्य के प्राचीन स्वरुप का पता लगता है। गद्य में ही ब्राह्मण ग्रंथ भी प्राप्त होते हैं जिससे प्रचलित भाषा के स्वरूप का ज्ञान होता है। किसी काल में वैदिक संस्कृत जन भाषा थी। जिसका प्रयोग प्रधानतया सांस्कृतिक तथा साहित्यिक कार्यों के लिए किया जाता था। इसलिए जितने भी प्राचीन संस्कृत साहित्य हैं वह सारे वैदिक संस्कृत में प्राप्त होते हैं। लोक भाषाओं का प्रचलन भी इसके साथ रहा होगा जिनमें संस्कृत के विभिन्न रुप प्रचलित हुए। पाणिनि आदि ने इनको 'प्राचाम्' (पूर),:उदीचाम्'(उत्तरी) आदि कहकर इसे स्पष्ट किया है।[30] संस्कृत के इन भिन्न-भिन्न रूपों से विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक एवं अपभ्रंशों का विकास हुआ तथा अंत में हिंदी आदि जो प्रांतीय भाषाएं हैं उनका क्रमशः विकास होता चला गया। पद रचना वैदिक भाषा की श्लिष्ट योगात्मक थी।धातु रुपों में लेट् लकार का प्रयोग होता था। वेद में संगीतात्मक स्वर की प्रधानता थी। उदात्त आदि स्वरों का प्रयोग किया जाता था।

**लौकिक संस्कृत:-** लौकिक संस्कृत को प्राय: ' संस्कृत' ही कहा जाता है। संस्कृत का जो अति प्राचीन तथा आदि काव्य के नाम से विख्यात वाल्मीकि रामायण 500 ई0पू0 का है। महाभारत, नाटक, पुराण काव्य आदि ग्रंथ 500 ईसा पूर्व से आज तक निरंतर अपना गौरव स्थापित किए हुए हैं। पतंजलि, कात्यायन यास्क आदि के लेखों से यह प्रमाणित होता है कि ईसा से पूर्व तक लोक व्यवहार के रूप में संस्कृत भाषा का प्रयोग होता था। जितने भी काव्य, कला, पुराण, नाटक, प्राचीन ज्ञान विज्ञान आदि हैं वह सभी संस्कृत में ही मौजूद हैं। आर्य जाति का प्राण संस्कृत साहित्य है। सिर्फ भारतीय भाषाओं को अनुप्राणित ना करके संस्कृत ने पुरे विश्व की भाषाओं को भी प्रभावित किया है।"[31]

**भाषा विज्ञान का उद्देश्य एवं उपयोगिता:-** वास्तव में विज्ञान का जो प्रथम मुख्य उद्देश्य है वह है मानव के ज्ञान पिपासा को तृप्त करना। व्याकरण शास्त्र के प्रयोजनों का वर्णन करते हुए महाभाष्यका पतंजलि मुनि ने कहा है कि- "ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्म: षड्ङगो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च" (महाभाष्य, आह्निक 1) अर्थात् षड्ङग वेद के अध्ययन करने में ब्राह्मण की दृष्टि सिर्फ ज्ञान की प्रति होनी चाहिए। आगे वे कहते हैं कि-"असंदेहार्थं चाध्येयं व्याकरणम्" (महा0आ01) अर्थात् शब्द एवं अर्थ विषयक संदेह के निवारण के लिए व्याकरण का अध्ययन करना चाहिए। इन उद्धृत वाक्य से यह स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है की अज्ञान सुलभ संदेहों का निवारण एवं स्वाभाविक ज्ञान बिपाशा की तृप्ति ही वास्तविक ज्ञान प्राप्ति का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। अतः भाषा के संबंध में जो की मानवों की पशुओं से बड़ी विशेषता है स्वाभाविक ज्ञान की जिज्ञासा को तृप्त करना ही भाषा विज्ञान का परम उद्देश्य है। शब्दों एवं उनके अर्थों के संबंध में भाषा विज्ञान के द्वारा ही उनके इतिहास के पता लगने से अनेकों रहस्य स्पष्ट होते हैं। उदाहरण के तौर पर बहुत ऐसे शब्द हैं जिसका आधुनिक स्वरूप एक होकर भी अर्थ में भिन्नता है। इस अर्थ भेद का कारण भाषा विज्ञान के द्वारा ही ज्ञात होता है।[32]

**संस्कृत का साहित्यिक विकास:-** प्राचीन आर्य भाषा के काल में संस्कृत के विभिन्न स्वरुप देखने को मिलते हैं, परंतु जब इस काल के अंतिम में महर्षि पाणिनि (700 ई. पू.) के व्याकरण से परिनिष्ठित रुप मिला, वहां पर रुपों की अस्थिरता समाप्त हो गई एवं भाषा एक ही रूप में स्थित हो गई। जितने भी संस्कृत साहित्य की रचना उस समय हुई वह सारे इसी नियत भाषा में लिखे गए। जिसके परिणाम स्वरुप संस्कृत की वाचिक धारा, प्राकृत, पाली आदि भाषाओं के रूप में परिवर्तित हो गई। जिन व्याकरण ग्रंथ की रचना महर्षि पाणिनि द्वारा हुई उस पर ही संस्कृत का रूप आज तक आश्रित है परंतु अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों का भी आगमन इसमें होता रहा। वैसे संस्कृत ग्रंथ जो पाणिनि व्याकरण का अनुसरण करने वाले हैं उन्हें लौकिक साहित्य कहा जाता है। इस अर्थ में महाभारत, रामायण तथा पुराण जैसे संपूर्ण लौकिक साहित्य को भी समाविष्ट कर लेता है।

**निष्कर्ष:-** इस प्रकार से उपरोक्त अध्ययन के पश्चात यह कह सकते हैं की संस्कृत भाषा का प्रयोग प्रारंभिक काल में जनसाधारण के मध्य कुछ शताब्दियों तक होता था। धीरे-धीरे यह शिक्षा ग्रंथ रचना, विद्वजनों तक शास्त्रार्थ एवं वाद विवाद आदि के क्षेत्र में यह सीमित होते चला गया। वर्तमान समय तो साहित्य रचना के क्षेत्र में संस्कृत का वास्तविक स्वर्ण युग है।

**संदर्भ :**


1. संस्कृत का भाषाशास्त्रीय अध्ययन, डॉ भोलाशंकर व्यास, भारतीयज्ञानपीठ काशी,प्रथम संस्करण- 1957, पृष्ठ – 36.
2. वही, पृष्ठ- 37.
3. वही, पृष्ठ- 37.
4. तैत्तिरीय ब्राह्मण1/7/7(यज्ञ संदर्भ में वाणी का महत्व).
5. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, डॉ कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी,2015, पृष्ठ – 190.
6. वही, पृष्ठ- 190.
7. वही, पृष्ठ- 190..
8. भाषा विज्ञान एवं भाषा शास्त्र, डॉ कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पंचदश संस्करण- 2016,पृष्ठ – 7.
9. वही, पृष्ठ- 6.
10. वही, पृष्ठ- 7.
11. संस्कृत भाषा विज्ञान, डॉ राज किशोर सिंह, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, चतुर्थ संस्करण - 1976, पृष्ठ - 3- 4.
12. वही, पृष्ठ- 7.
13. भाषा विज्ञान एवं भाषा शास्त्र, डॉ कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पंचदश संस्करण- 2016, पृष्ठ 55.
14. वही, पृष्ठ- 55.
15. वही, पृष्ठ- 55.
16. वही, पृष्ठ- 64.
17. वही, पृष्ठ- 65.
18. वही, पृष्ठ- 255.
19. वही, पृष्ठ- 255.
20. वही, पृष्ठ- 65.
21. वही, पृष्ठ- 66.
22. ऋग्वेद 8/100/11.
23. भाषा विज्ञान एवं भाषा शास्त्र, डॉ कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पंचदश संस्करण- 2016, पृष्ठ – 66.
24. वही, पृष्ठ- 67.
25. ऋग्वेद 10/90/9.
26. बृहदारण्यक उपनिषद् 2/4/10.
27. भाषा - शास्त्र प्रवेशिका, डॉ मोतीलाल गुप्त, राजस्थान प्रकाशन जयपुर - 2, प्रथम आवृति - 1970, पृष्ठ – 41.
28. वही, पृष्ठ- 41.
29. भाषा विज्ञान एवं भाषा शास्त्र, डॉ कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पंचदश संस्करण- 2016,पृष्ठ – 425.
30. वही, पृष्ठ- 426.
31. वही, पृष्ठ- 428.
32. तुलनात्मक भाषा शास्त्र एवं भाषा विज्ञान, डॉ मंगलदेव शास्त्री, प्रकाशक:इंडियन प्रेस प्राइवेट लिमिटेड,प्रयाग1956,पृष्ठ – 8.


•